मछुआरे की लड़की

- विनोद कुमार वर्मा

मछुआरे की लड़की

एक विकलांग लड़की के असाधारण
पराक्रम की गाथा

विनोद कुमार वर्मा

Vadanya™
Publication

बस्तर विश्वविद्यालय जगदलपुर के **एम.ए. हिन्दी** (2019-20) के पाठ्यक्रम **'आधुनिक गद्य साहित्य'** में **जयशंकर प्रसाद** (पुरस्कार), **चंद्रधर शर्मा गुलेरी** (उसने कहा था), **प्रेमचंद** (ईदगाह), **उषा प्रियम्बदा** (वापसी) की कहानियों के साथ इसे शामिल किए जाने पर मुझे हार्दिक प्रसन्नता हुई है। आशा है, इस कहानी की उपादेयता सें अकादमिक आचार्य, समर्थ समीक्षक, पटु प्राध्यापक व शोध-छात्र परिचित हो सकेंगे।

कहानी **'मछुआरे की लड़की'** को राष्ट्रीय स्तर की अपने संस्थाओं / पत्र-पत्रिकाओं ने समय-समय पर प्रकाशित किया है, जिनमें **कला समय** (फरवरी-मार्च 2008., भोपाल); **विकलांग विमर्श की कहानियाँ** (नीरज बुक सेंटर 2010., दिल्ली); **प्रयास प्रकाशन** (2014., बिलासपुर) कथा कोश 'कथा मध्यप्रदेश' (2017., भोपाल) प्रमुख हैं। यह कहानी **मराठी** व **अंग्रेजी** में भी प्राकाश्य है। **वदान्या प्रकाशन** बिलासपुर द्वारा राष्ट्रीय स्तर पर चर्चित इस कहानी के पुनर्प्रकाशन से मुझे प्रसन्नता हुई है। अंत में, इतिहास और साहित्य के अन्वेषक और विज्ञ **डॉ. विनोद कुमार वर्मा** को अशेष बधाई।

शुभकामनाओं सहित-

- डॉ. विनय कुमार पाठक
एम.ए., पी-एच.डी., डी.लिट् (हिन्दी)
पी-एच.डी., डी.लिट् (भाषा विज्ञान)

निदेशक, प्रयास प्रकाशन
सी-62, अज्ञेय नगर, बिलासपुर
मो. : 092298-79898

अपनी बात

माँ अपने मातृत्व के कारण संतति से सदा बड़ी होती है और यदि वह मोक्षदायिनी शांकरी हो तो संतति का उससे बराबरी कर पाना एक पल के लिए भी संभव नहीं है । मगर नर्मदा के तट में पली-बढ़ी विकलांगता का दंश झेल रही सोलह बरस की सरस्वती उर्फ शांकरीसुता ने 30 अगस्त 1973 को अनजाने ही यह कोशिश की । उस दिन शांकरी के प्रलयंकारी प्रवाह से आप्लावित अनेक गाँवों में विपदा से घिरे हजारों लोगों की वेदना से प्रत्युत्पन्न मानवीय संवेदनाओं के ज्वार से उपजी करूणा में आप्लावित सरस्वती अपनी पुरानी छोटी-सी नाव लेकर प्रकंपित मन से मालाखेड़ी गाँव के शताधिक लोगों की जान बचाने न जाने क्यों - अकेले ही निकल पड़ी थी । उस घड़ी जितने बेबस विपदा से घिरे गाँव वाले थे उतना ही असहाय प्रशासन व अन्य लोग भी थे । तब गाँव की औरतों ने सरस्वती के बारे में कहा कि उसे 'हवा' यानी प्रेतात्मा लगी है । कुछ ने कहा - वह पगली है तो कुछ ने कहा - काली कलुटी, निपट-गंवार, लुलिया की बात करना बेकार है !...सच चाहे जो भी हो, कोई बात न करे तो न सही, परंतु शांकरी के प्रलंयकारी बाढ़ से सरस्वती के जुझने की यही कथा है । यह कहानी है दो चरित्रों का - शांकरी और सरस्वती का । एक जिनकी महिमा विन्ध्याचल पर्वत से भी विशाल है दूसरी जो राई से भी लघु है यानी कुछ भी नहीं है । एक जो देवासुरों व मनुष्यों द्वारा सभी युगों में पूजित है एवं

संत-महात्मा जिनका हमेशा गुणगान करते हैं, दूसरी जो आधी-अधूरी, निरक्षर व गरीब है एवं उपेक्षा का दंश सहना जिसके नसीब में है । एक सतत् प्रवाहमान - मौन है, तो दूसरी रोजमर्रा की समस्याओं में जकड़ी मुखर और जिद्दी है । ...सचमुच शांकरी के साथ मछुआरन लड़की सरस्वती के चरित्र को उस ऐतिहासिक घटनाक्रम के संदर्भ में शब्दबद्ध करना अत्यंत कठिन है क्योंकि इसके लिए हिन्दी, अंग्रेजी या अन्य बोली-भाषाओं के ज्ञान से ज्यादा जरूरी है - मानवीय संवेदनाओं की भाषा को समझना व महसूस करना ।

...इस कहानी के बारे में बस इतना ही ।

सादर, सविनय ।

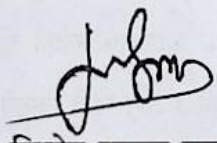

- विनोद कुमार वर्मा

कहानीकार, संपादक एवं समीक्षक

मछुआरे की लड़की

– विनोद कुमार वर्मा

(1)

कहते हैं, मध्यप्रदेश की नदियाँ उन कुँवारी बेटियों के समान हैं जो वहाँ की धरती से जन्म लेकर, वहीं की सुरम्यवादियों में विचरण करती हुई, जब यौवन की देहरी पर पहुँचती हैं तो अपने सौभाग्य का सिन्दूर और सुहाग की लालिमा पड़ोसी राज्यों के आँचल में बिखेर देती हैं, वहीं फलती-फूलती हैं । नर्मदा उनमें सबसे बड़ी है । आर्यावर्त को दक्षिण से अलग करने वाली यह नदी, समुद्र तल से साढ़े तीन हजार फुट की ऊँचाई पर, प्रकृति की सुरम्यवादियों में अवस्थित, मध्यप्रदेश के तीर्थराज अमरकण्टक से निकलती है । इसके उत्तर में विंध्याचल एवं दक्षिण में सतपुड़ा पर्वत श्रृंखलाएँ, चार सौ मील से अधिक दूर तक समानान्तर चली गई हैं । पहले 200 मीलों तक मण्डला की पहाड़ियों में विचरण करती हुई यह जबलपुर की ओर मुड़ जाती है । जबलपुर एवं होशंगाबाद के बीच नदी के किनारे 40 फुट ऊँचे हैं । अपने उद्‌गम स्थल से पश्चिमी सागर संगम में विलीन होने तक, सोलह श्रृंगार की यौवन छटा से धवलता बिखेरती, नर्मदा का संगमरमरी सौंदर्य, अत्यंत संकरे, जंगली व पथरीले रास्तों से गुजरकर बुंदेली, गौड़ी, निमाड़ी, मराठी एवं गुजराती भाषी क्षेत्रों को लांघती हुई - 895 मील का सफर तय कर, खम्भात की खाड़ी में गिरकर, अरब सागर में मिल जाती है । दक्षिण गंगा, शिवतनया, शांकरी, विपाशा, रेवा, मैकलसुता आदि अनेक नामों को धारण करने वाली पुण्य सलिला नर्मदा को गंगा और यमुना से भी अधिक पुण्यदायिनी मानने वाले, नर्मदा तट के किनारे बसे मण्डला, जबलपुर, भेड़ाघाट, नरसिंहपुर, होशंगाबाद, मालसर, बड़वानी, राजपिपला, ओंकारेश्वर, महेश्वर, अंकलेश्वर, भड़ोच व सैकड़ों नगरों-गांवों में रहने वाले लाखों लोगों के बीच यह किवदन्ती सदियों से प्रचलित है कि नर्मदा को सदा-सदा कुंआरी रहने का अभिशाप मिला है । ...माँ की तरह वह प्यार तो नहीं करती, मगर पूरब से पश्चिम की ओर कल-कल, छल-छल करती बारामासी नर्मदा और दक्षिण से उत्तर की ओर बहकर उसमें मिलने वाली सहायक नदियां- तवा, गजाल, देनवा, मोरन, दूधी, अजनाल के मीलों लम्बे तट पर मछुआरों का

एक बहुत बड़ा समाज परम्परागत रूप से अपना व्यवसाय करके जीवन यापन करता है । उसी नर्मदा की गोद में खेलती-कूदती बड़ी हुई है सरस्वती - एक धीवर लड़की, निपट गंवार, जिद्दी और अनपढ़ - सोलह बरस की ।

भादों के महीने में सूरज का कोई भरोसा नहीं । शाम का समय था । हल्की-हल्की हवा बहने लगी थी, चारों ओर बदली छायी हुई थी । इन दिनों नर्मदा का पानी बराबर चढ़ रहा था, पिछले कुछ दिनों से अच्छी बारिश हो रही थी इसलिए । पक्षियों की चहचहाहट और बहती नदी के शोर से बेखबर, नर्मदा के किनारे एक पत्थर पर कुछ परेशान-सी, कुछ उदास-सी बैठी सरस्वती अपने आप में डूबी थी । लाल छीटों वाली साड़ी घुटनों तक चढ़ी होने के बावजूद पानी में भीग रही थी । नदिया का हरहराता उफान इस समय जैसे उसकी आँखों में भी समा गया था । बात वही पुरानी शादी की । रिश्ता आया था कहीं से । सबेरे माँ और बाबूजी की खुसुर-पुसुर की आवाज सुनकर उसे सब मालूम हो गया था, ''....हीं हीं हीं मुझे शादी-वादी न करना। इत्ते भाई-बहन को कौन संभालेगा ? अभी चार-पाँच रूपया मछली पकड़कर कमा लेती हूँ तो घर का खरचा चल जाता है, चली जाऊंगी तो भूखे मर जाएंगे सब के सब।'' ...बेचारी करे भी क्या? हर समय घरवालों की ही फिक्र करनी पड़ती है । उसके पिता काशीराम क्षय रोग से ग्रस्त होने के कारण अधेड़ उम्र में ही बूढ़े हो चले हैं । माँ भी पति की चिंता में कमजोर हो गई है । उसके छोटे चार भाई और दो बहनें हैं। वह सबसे बड़ी है। परिवार का सारा बोझ एक तरह से उसी पर है । सरसराहट की आवाज से वह चौकन्नी हो गई । छोटा भाई एक थैला लिए उससे थोड़ी दूरी पर खड़ा था । थैले में कुछ मछलियाँ थीं ।

''का है ?'' उसने छोटे भाई से प्रश्न किया ।

''जिज्जीऽऽ वो देख...! हाथीऽऽ!!'' कुछ दूरी पर हाथियों को देख वह एकाएक चिल्लाया ।

सरस्वती ने पीछे पलटकर देखा । कुछ फकीरनुमा लोग आठ-दस हाथियों के झुण्ड को पानी पिलाने व नहलाने के लिए नदी के घाट की तरफ ला रहे थे । ये लोग गणेशोत्सव के समय यदा-कदा, दो-चार हाथियों को नगर घुमाने ले आते हैं व लोगों से दान में गेहूँ, दाल, गुड़, पैसा आदि वसूलते हैं । वह सब माजरा समझ गई । तभी बचपन की एक घटना याद आते ही उसका दिल धक्-

धक् करने लगा ।

बात लगभग सात-आठ बरस पहले की है - तब वह केवल आठ की रही होगी । ऐसे ही एक मौके पर वह हाथी में सवारी करने की जिद्द कर बैठी और जोर-जोर से रोने लगी। बाबूजी का जोरदार थप्पड़ भी खाया, मगर रोना बंद नहीं हुआ । उसके अविरल रोने के शोर से एक गमजदा महावत का दिल पसीज गया और उसे अपने साथ हाथी पर बैठा लिया । तब हाथी की सवारी उसके लिए कल्पनातीत थी । ...रोमांच से उसका सारा शरीर सिहर रहा था । ढेर सारे हमउम्र तमाशाई बच्चे थोड़ी दूरी पर खड़े तालियाँ बजाते शोर मचा रहे थे और हाथी की मदमस्त चाल को देख वे मंत्रमुग्ध थे । हाथी पर सवार सरस्वती उन्हें तिरछी नजरों से देखती ऐसा महसूस कर रही थी, मानों कोई रानी हो और प्रजागण उसके स्वागत में तालियाँ बजाकर जय-जयकार कर रहे हों । कितना अनुपम... कितना सुखद क्षण था वह। ''...आह ! ये का हो गया मुझे ?'' अपने धक्-धक् करते दिल को बहलाने लगी । तभी हवाई-जहाज की तेज गड़गड़ाहट सुन दोनों भाई-बहन आकाश की ओर ताकने लगे, वह काफी नजदीक से गुजरा व मिनट भर में दूर होकर आंखों से ओझल हो गया । ऐसे मौके पर न जाने क्यों, सरस्वती के दिल की धड़कन चलती रेल की तरह एक बार फिर बढ़ गई, ''...ओह! का मैं इसमें बैठ पाऊँगी ?'' वह अपने आप बड़बड़ाई, फिर उसने अपना माथा ठोंका। तभी छपाक की आवाज के साथ पानी के बहुत सारे छींटे उसके ऊपर गिरे । हवाई-यात्रा का ख्याली पुलाव पल-भर में जमीन पर आ टपका । वह अचकचाकर इधर-उधर देखने लगी । हाथ में पत्थर लिए छोटा भाई उसे यमदूत की तरह दिखाई पड़ा। उसे यह समझते देर नहीं लगी कि उसने एक दूसरा बड़ा पत्थर उसके नजदीक पानी में दे मारा है ! वह पीटने को उद्यत हुई तो वह 'काली-कलूटी बिल्ली' कहकर भागने लगा। अच्छी कद-काठी की सरस्वती का रंग सांवला था, मगर चेहरे में अजीब-सी कशिश थी । शरीर में ताकत और फूर्ती दोनों थीं मगर उसे सुन्दर तो नहीं कहा जा सकता । इस घोर अपमान भरी उपमा के कारण यदा-कदा उसके हाथों छोटे भाई की पिटाई भी हो जाया करती थी । पता नहीं किसकी दया से आज वह बच गया ।

''लल् लुलिया... ए लुलिया... मछली देने नई जाना का ?'' वह एक कदम आगे बढ़ पुनः चिढ़ाता हुआ बोला ।

बचपन में सरस्वती के दाहिने पैर पर एक बड़ा-सा पत्थर गिर गया था, पैर कुचल गया । वह तीन माह सरकारी अस्पताल में पड़ी रही । पैर में जहर फैल गया था । डॉक्टर की कार्य-कुशलता से उसका दाहिना पैर कटने से जरूर बच गया, मगर वह विकलांग हो गई । इसके बाद लोग उसे 'लुलिया' कह चिढ़ाने लगे । एक तरह से इस दुर्घटना के बाद लोग उसका नाम ही भूल गए और वह 'लुलिया' बन गई, अब बैशाखी ही उसका सहारा था ।

वह अपने छोटे भाई को कुछ देर तक खा जाने वाली नजरों से घूरती रही । 'लुलिया' का संबोधन आज उसे बहुत बुरा लगा और बचपन की एक घटना याद आते ही उसकी आंखें डबडबा गई ।

बात लगभग छह-सात बरस पहले की है । एक दिन अमरकण्टक से होशंगाबाद पधारे एक तपस्वी के दर्शन के लिए सरस्वती को साथ लेकर, उसकी पड़ोसन नानी, मुँह-अंधेरे ही घर से निकल पड़ी । उषा की लालिमा, पूर्वी क्षितिज पर, पहाड़ों के पीछे हलकी-हलकी नजर आने लगी । ठण्डी मलयचुम्बित हवाओं के पहाड़ों से टकराने के कारण आत्मा को तृप्त कर देने वाली पांचजन्य शंखनाद-सी ध्वनि के साथ कानों में मधुरस घोलते पक्षियों के कलरव से दूर मंदिर में बजते घण्टियों का एहसास अनाहत नाद-सा पारलौकिक आनन्ददायी था । रात्रि के अंतिम प्रहर को विदा देती, भोर की निस्तब्धता को तोड़ती यह अनाहत-ध्वनि, अनुभूति का यह सत्य - किसी आघात द्वारा नहीं वरन प्रकृति द्वारा स्वमेव सृजन किया गया था । सरस्वती कभी आसमान की ओर निहारती जहाँ इक्के-दुक्के तारों के साथ स्नानदान पूर्णिमा का चाँद पश्चिमी क्षितिज में अस्ताचल की ओर था तो कभी शारदीय ओस की बूंदों और हवाओं के ठण्डक से कंपकंपाते नंगे पैरों को संभालने की कोशिश करती । नानी की अंगुली थामे, एक हाथ से बारम्बार आँखे मींचते, तीन मील पैदल चलने के बाद डरते-सहमते गन्तव्य तक पहुँचते-पहुँचते उसकी नींद गायब हो चुकी थी और जोरों की भूख सताने लगी थी । उसने क्षुधा शांत करने के इरादे से फ्रॉक की जेब में हाथ डाला तो दिल धक् से रह गया, मक्के की लाई का एक दाना भी वहाँ नहीं था । वह किंकर्त्तव्यविमूढ़-सी व्याकुल हो इधर-उधर ताकने लगी । दरअसल उसने पूर्व रात्रि भोजन में 'गेहूं की घुंघरी' खाई थी - वह भी आधा पेट ही नसीब हुआ था। इन दिनों निमोनिया पीड़ित बाबूजी बिस्तर में हैं व माँ को कुछ

दिन पूर्व ही बच्चा हुआ है इसलिए वह भी बाहर से कुछ कमाकर लाने में असमर्थ हैं । एक तरह से उन्हें फांके में ही दिन गुजारना पड़ रहा है । इस समय चना फुटाना, गेहूं की घुंघरी व मक्के की लाई ही उनका सहारा है । आज घर से निकलते समय माँ द्वारा कपड़ों के बीच छिपाए मक्के की लाई में से अपने हिस्से का उसने अपने फ्रॉक की जेब में चुपचाप भर लिया था, मगर माँ से छिपाए मक्के की लाई भी कम्बख्त फटी जेब से एक-एक कर रास्ते में कब गिरे, इसका उसे जरा भी भान नहीं हुआ ।

उधर पूजा-आरती के बाद स्वामीजी का व्याख्यान - रामायण, महाभारत, मत्स्यपुराण, स्कन्धपुराण, कूर्म तथा वायुपुराण से लेकर पद्मपुराण तक के प्रसंगों से भरा पड़ा था । 'शंकर और शांकरी' यही आज का विषय था - ये उनके आराध्य भी थे । पौराणिक कथाओं का उल्लेख करते हुए उन्होंने बताया कि तप करते समय भगवान शंकर की दिव्य-देह से सूर्य के प्रचण्ड तेज से उत्पन्न उष्मा के कारण पसीना बहने लगा जिससे नर्मदा नदी की उत्पत्ति हुई और वह 'शांकरी' कहलायी । स्कन्धपुराण में कहा गया है कि कलियुग के पांच हजार साल व्यतीत हो जाने पर गंगाजी के समस्त महात्म्य स्वयमेव नर्मदा में समाहित हो जाएंगे । पुराणों में नर्मदा को सामवेद की साक्षात् मूर्ति माना गया है । दर्शनमात्र से शरीर, मन और आत्मा को पवित्र कर देने वाली पुण्य-सलिला नर्मदा की परिक्रमा को प्रदक्षिणा कहते हैं जो सभी देवी स्थानों, तीर्थों की परिक्रमा में सबसे बड़ी मानी गई है । अमरकण्टक लौटने से पूर्व उनका यह अंतिम व्याख्यान छोटा ही था, मगर सरस्वती को इनमें कोई दिलचस्पी नहीं थी, न ही इतनी अकल थी उसमें कि उनकी संस्कृत-निष्ठ भाषा को समझ सके । पड़ोसन नानी के साथ सबसे आगे बैठी भूख से व्याकुल नन्हीं जान, अपने सूखे होंठों पर बारम्बार जीभ फेरते हुए स्वामी जी के चेहरे को टुकुर-टुकुर ताक रही थी, मानों वह महाकवि बाणभट्ट की कादम्बरी का आम्रकुट हो जिसके सघन वन कानन में, वृक्षों की डालियाँ खट्टे-मीठे फलों से लदी हों... या शायद वह प्रतीक्षा कर रही थी कि उनका व्याख्यान कब खत्म हो तो अपने हिस्से का खीर-पूड़ी प्रसाद उसे भी मिले और उसे खाने के बाद पानी पीकर पेट भर लिया जाए । शायद शारदीय पर्व के अंतिम दिवस की खीर-पूड़ी प्रसाद का आकर्षण नानी के साथ उसे भी यहाँ तक खींच लाया था । बहरहाल फटेहाल

नानी आज चना-फुटाना खरीदकर उसे उपकृत कर पाएगी, इसकी कोई संभावना उसे नजर नहीं आ रही थी । अंत में लोग कतारबद्ध होकर एक-एक कर उनका आशीर्वाद व प्रसाद लेने लगे । सरस्वती की बारी आई तो उन्होंने उसके सिर में हाथ फेरा, 'शांकरी सुता' कह आशीर्वाद दिया व दोने में प्रसाद भी । यह आशीर्वाद उन्होंने सरस्वती को ही दिया हो ऐसी कोई बात न थी, मगर वापसी में अपनी मुँहबोली नानी के हिस्से का प्रसाद खाते-खाते उन्हें बस इसी बात पर वह बार-बार परेशान करने लगी कि स्वामीजी ने उसे 'शांकरी सुता' क्यों कहा और उसका मतलब क्या है ? पड़ोसन नानी ने झल्लाकर कहा, ''निगोड़ी, मोरे बाटे का भी खीर-पूड़ी खा गई और मुँह अभी चल ही रहा है ! कलमुंही, उसका मतलब का है मैं का जानू ? उनने तेरा नया नाम रख छोड़ा होगा ! ...समझी की नई ?''

सरस्वती ने प्रसन्न होकर कहा - समझ गई !

तब से वह अपने आपको 'शांकरी सुता' कहने लगी थी और समझने भी लगी थी । हालांकि उसे अब भी नहीं मालूम कि 'शांकरी सुता' का शाब्दिक अर्थ क्या है ? लोग उस पर हँसते व उसे 'लुलिया' कहकर चिढ़ाते तो उसे बहुत गुस्सा आता और वह मुँह फुलाकर सोचती, ''ये कलमुँहे उसे 'शांकरी सुता' भले न कहें, कम-से-कम सरस्वती ही कह देते । ...लुलिया कहने वालों का मुँह जले !'' 'शांकरी सुता' उसके लिए बहुत कठिन शब्द था । वह हिन्दी था कि अंग्रेजी, उर्दू, फारसी या संस्कृत - वह यह नहीं जानती थी, मगर उससे इतना निष्कपट प्रेम हो गया कि वह इसके लिए 'सरस्वती' को भी छोड़ने को तैयार थी।

सरस्वती के लिए वह एक अर्थहीन शब्द 'शांकरी-सुता' जिसे किसी ने कहा और किसी ने अर्थ समझाया, जिसे वह आज तक न समझ पाई, न भूल पाई - उसी शब्द से प्रेम ने आज छोटे भाई को उसके कोपभाजन का शिकार बना दिया । अपने मन की 'शांकरी सुता' आज भाई द्वारा 'लुलिया' के संबोधन को सहन नहीं कर पायी । आंखों में आंसू आ गए, गुस्सा भी आया । उसे एक तमाचा जड़ दिया और चिल्लाकर बोली - चल !

बेचारा सिटपटा गया, मन-ही-मन सोचने लगा, ''जीऽजी इत्ता गुस्सा तो कभी नई करती !''

रास्ते में कुछ स्कूली बच्चे एक जैसे परिधान में घर वापस लौट रहे थे- कुछ पैदल और कुछ साइकिल पर । चलते-चलते वह फिर कल्पनालोक में खो गई । ''...कित्ता अच्छा होता कि मेरे भाई-बहन भी स्कूल जाते और मैं घर में उनके आने का रस्ता देखती।'' ...अभी कुछ ही दिनों पहले की बात है वह जिला मुख्यालय में आयोजित स्वतंत्रता-दिवस समारोह देखने गई थी । वहाँ झाकियाँ निकली, पुलिस, एन.सी.सी., स्काउट-गाइड के नन्हें छात्रों ने परेड में भाग लिया - रंग-बिरंगी पोशाकें पहने लड़के-लड़कियों के नृत्य और अनेक मनमोहक कार्यक्रमों को लगभग दो घण्टों से भी अधिक समय तक वह मंत्रमुग्ध देखती रही । बीच-बीच में उसकी नजर हवा में लहराते तिरंगे की ओर भी चली जाती थी । मन्द-मन्द हवा बह रही थी। ...मिट्टी की सौंधी महक के साथ फूल और इत्र की खुशबू चारों ओर फैली हुई थी । उसके मन में कई विचार आ-जा रहे थे । ''...ओह कित्ता बुरा हुआ जो मैं इस्कूल नई गई।'' अचानक पत्थर से पैर का अंगूठा टकराया और वह गिरते-गिरते रह गई, ...चोट उसी पैर में आई थी, जिसका पंजा बचपन में टेढ़ा हो गया था । चोट ज्यादा गहरी नहीं थी, मगर खून रिसने लगा ।'' ...ध्यान भंग हुआ । वह झुंझला गई । इसके बाद छोटे भाई ने बात करने की कई बार नाकाम कोशिश की, मगर वह अनमने से रास्ते भर चलती रही ।

दोनों भाई-बहन घर लौटे तो अंधेरा घिर आया था, कुछ बूंदा-बांदी हो रही थी ।

''कहाँ गई थी ?''-सरस्वती को देखते ही काशीबाबू ने बेचैनी से पूछा।

''मछली देने गई थी ।'' - वह बेरूखी से बोली ।

''मेसे क्यों नई कही, इत्ती रात तेरा आना-जाना ठीक नई ।''

''ओह बाबूजी, का मैं छोटी हूँ जो नरमदा में डूब मरूंगी !''

काशी बाबू उसे घूरकर देखने लगे । कण्डील की हल्की पीली रोशनी में उसका सांवला सौम्य चेहरा दमक रहा था । वह हाथों में तौलिया लिए किनारे खड़ी बालों से पानी सुखा रही थी। ...उन्हें ऐसा लगा जैसे वह एक ही दिन में बहुत बड़ी हो गई है । इतनी बड़ी कि... मन चिंता से बैठने लगा, ''ब्याव के लिए पैसा कहाँ से लाऊँगा ? मैं अकेले तो कुछ कर पाऊँगा नहीं, सरस्वती है तो

घर का खरचा चल जाता है । चली गई तो... बस... ?''

''बाबू, नर्मदा में बाढ़ आएगी का ? मालाखेड़ी का दीनू कोटवार कहे रहा कि...'' और उसी समय काशी बाबू की खोखली और रसहीन हँसी सुनकर एकबारगी वह सहमकर चुप हो गई । बीमार काशीबाबू की एक उदास और बैठी हुई यह हँसी... जिसे वह अकसर सुनती है, कुछ सोचती है फिर भूल जाती है।

''कइसे कटेगी बारिस... कोई भरोसा नई।'' काशीबाबू दीवारों की मजबूती का अंदाजा लगाते हुए जैसे अपने आप में बोले । कच्ची दीवारें एक ओर झुक रही थीं और उसे गिरने से बचाने के लिए जगह-जगह बल्लियों के ठेके लगे थे । फिर भी वे आश्वस्त थे, दूसरे मछुआरों की झोपड़ी से तो उनकी झोपड़ी मजबूत ही थी ।

''सच बाबूजी,'' सरस्वती अपनी बात को आगे बढ़ाने की गरज से, मगर दबी जुबान से बोली ।

काशीबाबू उसकी बात को फिर भी टाल गए । उन्हें फिक्र थी, घर की, सरस्वती के ब्याह की, अपनी बीमारी की और बहुत सारी समस्याएं थी उनके सामने । बाढ़ जो अभी आई ही नहीं थी, उसके बारे में सोचना वे फिजूल समझते थे ।

''कोई है... ?'' काशीबाबू एकाएक जोर से चिल्लाए । मगर कोई जवाब न आते देख आदतन गुस्से में बोले - ''सुअर कहाँ मर गए हैं सबके सब!'' और फिर एक बल्ली को ठीक करने में मशगूल हो गए । उनकी बात और गाली को सुनने वाला वहाँ, सरस्वती के सिवा और कोई नहीं था ।

''उं-ह!'' वह मुंह बिचकाकर बुदबुदाई और अपने आप कहने लगी, ''बाढ़ से लोग न जाने काहे डरे हैं, नर्मदा मैया चढ़ाव पर होवे, तो डोंगा चढ़े में मजा आवे...''

उसे क्या पता, काशीबाबू जानते हैं कि जब नर्मदा मैया को क्रोध आता है तो हजारों मरते हैं...। यही कोई चालीस-पचास साल पहले की बात है - सन् 1926 की । बाढ़ क्या आई तबाही आ गई थी । सैकड़ों, हजारों मारे गये । होशंगाबाद नगर का कोई दो-तिहाई भाग जलमग्न हो गया था । बाढ़ का पानी खतरे के निशान से बाइस फुट ऊपर तक चढ़ आया था! उस समय काशीबाबू

पैदा भी नहीं हुए थे, मगर बड़े-बूढ़ों से सुनी-सुनाई बातें, ऐसी-ऐसी बातें कि उन्हें मानने को जी नहीं चाहता । काशीबाबू को वे सारी बातें जबानी याद है । सरस्वती न जाने कितनी बार उनसे यह कहानी सुन चुकी है और हर बार उसे यही लगता है कि बाबूजी बढ़ा-चढ़ाकर बता रहे हैं । फिर भी नदियाँ, नावों और छोटे-मोटे तूफानों से खेलती-कूदती वह जैसे-तैसे बड़ी होती गई, नदियों और उसमें आने वाली बाढ़ के प्रति वैसे-वैसे उसका आकर्षण बढ़ता गया ।

(2)

पिछले चौबीस घण्टों से लगातार मूसलाधार बारिश हो रही थी, समूचे होशंगाबाद नगर का जन-जीवन अस्त-व्यस्त हो गया था । कहते हैं इतनी बारिश पहले कभी देखने में नहीं आई । इन हालात में बाढ़ की संभावना से इंकार नहीं किया जा सकता । नर्मदा में बाढ़ कोई आकस्मिक बात नहीं और नदी किनारे रहने वाले खासकर मछुआरे, इसे बहुत ज्यादा महत्व देते भी नहीं। उस रात लोगों को रेडियो द्वारा चेतावनी दी गई और सुरक्षित स्थानों पर चले जाने के लिए अनुरोध किया गया तो अधिकांश लोगों को बाढ़ की विकरालता के बारे में मालूम ही नहीं हुआ । वे सब अपने जीवन में आने वाले खतरे की गंध से बेखबर, सामान-असबाब समेटने में ही रह गए । थोड़े बहुत लोगों ने रेडियो से चेतावनी सुनी भी, मगर यही समझा कि बाढ़ मामूली है, आई-गई हो जाएगी ।

...घटाघोप काली अंधेरी रात और वर्षा की यह बेधड़क बौछार ! पानी की तड़तड़ करती बूंदों से खप्पर टूट रहे थे । सूं-सूं करती तेज हवाओं से झोपड़ियों के छप्पर गिर रहे थे । बड़े-बड़े वृक्ष धराशायी हो रहे थे, तो वे कहाँ टिक पाते ! ...न जाने क्या बात थी कि काशीबाबू की झोपड़ी, इस आंधी-तूफान और वर्षा में भी सही सलामत खड़ी थी ।

29 अगस्त, 1973 की वह भयावनी रात... काले-काले बादल... घनघोर घटाएँ ! ...कड़कती बिजलियाँ!! ...मूसलाधार बारिश!!!

बिजली की तेज गड़गड़ाहट और मूसलाधार बारिश की आवाज से सरस्वती घबराकर उठ बैठी । यही कोई आधी रात का समय था । परिवार के अन्य सभी लोग इससे बेखबर मीठी नींद में थे । इस धीवर परिवार के लोग दिनभर मेहनत करते हैं इसलिए रात नींद भी उन्हें खूब आती है । उन्हें सोता

देख वह आश्वस्त हुई । डर उसके मन से भाग गया, फिर भी कण्डील की लौ उसने और तेज की ।

छप्पर से जगह-जगह पानी टपक रहा था, ''उं-हं ! नींद में भी भला कोई पानी टपकने की फिक्र करे हैं...'' वह अपने आप बड़बड़ाई और चादर खींचकर सो गई ।

30 अगस्त 1973... दिन गुरूवार ।

भारत भर में गणेश-उत्सव की धूमधाम से तैयारियाँ हो रही थीं । हिन्दू महिलाएं 'तीजा' के उपवास पर थी । ...उधर नर्मदा में भीषण बाढ़ से होशंगाबाद नगर का अधिकांश भाग और नदी किनारे के पचासों गाँव डूब गये थे ।

लोग फटी-फटी आँखों से प्रकृति की विनाशलीला को देख रहे थे । देख रहे थे अपने घरों को, झोपड़ियों को उजड़ते हुए... फसलों को नष्ट होते हुए। ...और देख रहे थे, डूबते असहाय लोगों को... और न जाने क्या-क्या... मगर विवश थे । ...उन्हें सामान-असबाब की फिक्र कहाँ ? ...उन्हें फिक्र थी अपनी जान की... नन्हें-मुन्नों की जान की । विघ्न-विनाशक के जन्मदिन से पूर्व ही न जाने क्यों नर्मदा मैया को क्रोध आ गया था । झोपड़ियों और कच्चे मकानों में रहने वालों पर तो जैसे कहर ही टूट पड़ा था ।

चारों ओर पानी ही पानी और पानी के ऊपर कुछ टूटे-फूटे मकानों के अवशेष और वृक्षों की शाखाएँ । प्रातः नर्मदा मैया के विकराल रूप को देखती सरस्वती अवाक् थी और विचारों के सैलाब में डूबी अपने आप में उलझी हुई थी। ''का बाबूजी इसी जलजला की बात बताते रहे ? ....यह तो बाढ़ नहीं ! ...उससे कित्ता बड़ा है!! ...डोंगा का कोई चला पावें इसमें ?''

सुबह सात बजने को आया... वर्षा थम गई थी मगर नर्मदा में उफान अपने शबाब पर था । तेज सर्द हवाओं से ठिठुरती, तट के एक किनारे किंकर्त्तव्यविमूढ़-सी बैसाखी के सहारे खड़ी सरस्वती चंचलनयनसुता हिरनी की तरह भीषण बाढ़ में डूबे विशालकाय वृक्षों, टूटे-फूटे मकानों के अवशेषों, बहते लकड़ियों के ठूंठों-टहनियों, असहाय स्त्री-पुरूषों, पशु-पक्षियों व प्रचण्ड वेग से बहती नर्मदा को देख अत्यंत व्यथित थी । विंध्य-सतपुड़ा के मध्य स्थित मैकल पर्वत के ऊबड़-खाबड़ पत्थरों की चट्टानों पर भीषण गर्जना के साथ

प्रवाहित जीवनदायिनी पुण्य सलिला का यह रौद्र-रूप उसने पहले कभी नहीं देखा था । सपनों में, बहुधा वह बाढ़ में अपने आपको नाव चलाते हुए देखती थी, ऐसे समय वह नींद में बड़बड़ाने लगती और तब रात में बाबूजी की डांट व गाली सुननी पड़ती। 'सुअर की औलाद' बाबूजी की प्रिय गाली थी जिसे अकसर वह रात में भी सुनती थी । वे यह गाली खासकर अपने बच्चों को ही देते थे । एक बार गलती से पड़ोसी के लड़के को यह गाली दे दी तो वह धमाधम मची कि पड़ोसी के साथ उन्हें भी हवालात में हवा खाने की नौबत आ गई थी। ...बाबूजी ने कभी बाढ़ के बारे में सोचा ही नहीं । उधर परीलोक की कथा की तरह, स्वरचित बाढ़ का सृजन कर, उसमें नाव चलाने की बात सोचकर खुशी से रोमांचित होना सरस्वती को बचपन से ही अच्छा लगता था व अब तो और अच्छा लगता है । मगर आज स्थिति इससे भिन्न थी । साक्षात् काल बनी मैकलसुता के इस रौद्र-रूप को देखकर रह-रहकर उसके शरीर में सिहरन हो रही थी । चारों ओर कोलाहल और अफरा-तफरी का आलम था... कितने बह गए तो कितने गाँव डूबे ? ...कितने मकान ढह गए तो कितने दबे और कितने मरे ? ...किसके पाप का फल है यह ? आदि । यही सब चर्चा का विषय था, यही वह सुन रही थी और सोच भी रही थी-- कुछ सच था और कुछ झूठ । मगर उस दिन होशंगाबादवासी व उसके आस-पास के लोग सच-झूठ और पाप-पुण्य से परे एक ऐसी विपदा में घिरे हुए थे जो पिछले सौ सालों में सबसे बड़ी थी ।

इसी समय नर्मदा के प्रचण्ड वेग में बहते जड़ से उखड़े एक वृक्ष की टहनी से लिपटे एक नवयुवक को सरस्वती ने देखा जो नजरों के सामने ही छिटककर नदी में जा गिरा । यह दृश्य देखकर सरस्वती के मुँह से चीख निकल गई, उसका शरीर काँपने लगा । थोड़े ही देर में, दो मछुआरों ने, कुछ फासले पर, तट के किनारे ही उस युवक को पकड़ लिया, अभी उसमें जान बाकी थी । दो घण्टे बाद अस्पताल में होश आने पर उसने मालाखेड़ी गाँव की भयावह स्थिति का बयान किया तो जिला प्रशासन के कान खड़े हो गए !

इस बाढ़ ने वैसे तो लाखों लोगों को चपेट में ले लिया था । कई गाँव व हजारों लोग बाढ़ के पानी में घिरे हुए थे । उनके पास न खाने को अनाज था, न रहने को घर, न पहनने को कपड़े । कुछ बह गए तो मकानों के ढहने,

भूस्खलन व नाव के उलटने से अनेक काल-कलवित हो गए थे । प्रशासन ने युद्धस्तर पर राहत और बचाव कार्य शुरू कर दिया था और उनकी कोशिश यही थी कि बीमारी और दुर्घटना में कम-से-कम जान जाए व 1926 जैसी भयावह स्थिति की पुनरावृत्ति न होने पाए, जब इसी नर्मदा की बाढ़ में हजारो निर्दोष बेमौत मारे गये थे ।

यदि उस युवक की बात को सच मान लें तो मालाखेड़ी में फंसे लोगों की स्थिति सचमुच चिंताजनक थी । उसने बताया कि सौ से अधिक लोग अपनी जान बचाने के लिए गाँव के जिस इकलौते दुमंजली इमारत की छत में शरण लिए हुए हैं, वह बहुत पुरानी व कमजोर है और 20-22 फुट पानी में डूबी हुई है । छत का एक किनारा गिर चुका है और पूरी की पूरी इमारत कभी भी गिर सकती है...। उस जर्जर इमारत के ढहने का मतलब था - सौ से अधिक लोगों की जल समाधि ! एक तरह से देखा जाए तो उनकी स्थिति अन्य गाँवों में बाढ़ से घिरे लोगों से एकदम भिन्न थी । यही वह बात थी जिसने जिला प्रशासन को हलाकान कर दिया । उस युवक की बात को न मानने का कोई कारण भी नहीं था। भोपाल विश्वविद्यालय में अध्ययनरत वह साहसी युवक एक अच्छा तैराक था व रिश्तेदारों से मिलने मालाखेड़ी आया था । अन्य लोगों के साथ उसने भी पूर्व रात्रि उसी जर्जर इमारत की छत पर काटी । भोर होने का इंतजार था उसे, वहाँ बेमौत मरने की अपेक्षा होशंगाबाद तक का फासला तैरकर पार करने का निश्चय उसने रात में ही कर लिया था । अंततः सुबह 5 बजे वह गन्तव्य की ओर निकल पड़ा। ...वहाँ फंसे लोगों की दुआएँ ईश्वर ने कबूल की या नहीं, यह अलग बात है, मगर वह युवक, अपनी जान बचाने के साथ उनकी दास्तान भी लोगों तक पहुँचाने में कामयाब हो ही गया ।

(3)

सुबह लगभग नौ बजे यह खबर बिजली की तरह चारों ओर फैल गई। इस खबर को होशंगाबाद से भोपाल फिर दिल्ली, अम्बाला छावनी, कच्छ, कन्याकुमारी, कश्मीर, लौहार, मास्को और न्यूयार्क तक पहुंचने में केवल कुछ घण्टों का ही समय लगा । नर्मदा की बाढ़ में सैकड़ों लोगों के मारे जाने की संभावना अभी भी बनी हुई है - यह खबर मास्को या न्यूयार्क के लिए छोटी हो

सकती थी, मगर मध्यप्रदेश शासन के लिए यह आफत का संदेश था ।

इस आपदा से निपटने के लिए सहायता सामग्रियों के आने का क्रम शुरू हो गया था । जिला प्रशासन के पास बाढ़ से घिरे लोगों की मदद के लिए दो हेलीकॉप्टर भी आ गए थे मगर उनसे खाने-पीने का सामान, दवाई आदि जीवन रक्षक सामग्री ही गिराई जा सकती थी । वहाँ वे विशेषज्ञ मौजूद नहीं थे जो रस्सी के सहारे नीचे उतरकर लोगों के प्राणों की रक्षा कर पाते । सेना के जवान बचाव उपकरण लेकर इतनी जल्दी आ सकें - यह मुमकिन नहीं था । दूसरी ओर बाढ़ के तेज प्रवाह में नाव लेकर जाने के लिए कोई नाविक तैयार नहीं था। ...उस समय नाव लेकर जाना अपनी मौत को बुलाने से कम भयानक नहीं था, फिर कोई ऐसा करे भी क्यों ? अपनी जान किसे प्यारी नहीं होती ? ...बाढ़ भी कोई साधारण नहीं । कहते हैं नर्मदा में इतनी भयंकर बाढ़ पिछले सौ सालों में कभी नहीं आई । बाढ़ का पानी खतरे के निशान से छब्बीस फुट ऊपर तक चढ़ आया था! ...छब्बीस फुट !!

''बाबूजी, बाबूजी ?'' सरस्वती यह समाचार सुनते ही घर आकर संयत होते हुए काशी बाबू से बोली - ''मालाखेड़ी में सौ से ऊपर आदमी बाढ़ में घिरे हैं का ?''

''हाँ, बेटी... नरमदा मइया ही सबकी रच्छा करेगी... अपने यहाँ के पंडत जी भी वहीं हैं, पूजा करने गए हैं...''

सरस्वती अपने धक्-धक् करते दिल को चुप कराती उनकी बात सुनती रही । काशीबाबू को कुछ ज्यादा बोलने की आदत है । वे अपनी रौ में बोलते रहे - ''कहे रहे है कि अबकी बार भारी सूखा पड़ने वाला है... का का नछत्तर बताए रहे कि मंगल पे शनि गिरत रहा कि शनि में मंगल...! मुझे याद नई आ रहा...''

''बाबूजी, वे मर जाएंगे !'' वह बेचैनी से हाथ मलती हुई बोली ।

काशी बाबू चुप हो गए ।

''मैं डोंगा लेकर जाऊँ ?'' काशी बाबू को चुप देख वह उत्साहित होकर तत्क्षण बोली ।

''तू जाएगी ?'' काशी बाबू झुंझलाकर कर्कश स्वर में बोले, ''वहाँ डूबकर मर नई जाएगी !''

''नई बाबूजी मैं जाऊंगी ।'' सरस्वती अपनी बात पर अड़ गई ।

काशी बाबू और झुंझला गए - ''डोंगा कहाँ है जानती हो ? जिस पेड़ में डोंगा बंधे हैं वह पेड़ भी डूबे हैं और वहाँ पानी भी कम नहीं ।''

वह बिना कुछ बोले वहाँ से जाने लगी । काशी बाबू चिल्लाए, ''सुअर की औलाद !''

सरस्वती को भी गाली सुनकर गुस्सा आ गया । गाली से उसे बहुत चिढ़ होती है । उसकी इच्छा हुई कि वह भी इसी वक्त बोल दे, ''तुम भी नरमदा में डूब मरो !'' मगर बोली कुछ नहीं । वह चुपचाप चली गई ।

''उं-हूं,'' वह मुंह बिचकाकर अपने आप बोली, ''गाली देना तो बाबूजी की आदत रहे ।'' यह सरस्वती की खास आदत है कि जब भी कोई चीज उसे पसंद नहीं आती या बहुत बुरी लगती है तो वह मुँह बिचकाकर ही अपने आपको तसल्ली दे लेती है ।

थोड़ी देर बाद वह वापस आकर बोली, ''डोंगा किनारे ले आई हूँ, अब मैं जाऊँ?''

''तू !'' - काशी बाबू सन्नाटे में आ गए । उनके मुँह से कुछ बात ही नहीं फूटी । होंठ कांपने लगे । उन्हें लड़की की जिद में एक अनजाने खतरे का एहसास हो रहा था । वे टकटकी लगाए सरस्वती का मुँह निहारने लगे । उसके चेहरे पर कुछ बूंदे चमक रही थी... वे पानी की बूंदे थी या पसीने की... न जाने किसकी थी... मगर काशी बाबू को क्षणभर के लिए ऐसा लगा जैसे वे बूंदे नहीं आकाश के छोटे तारे हैं एवं उन तारों में चमक हैं, तेज है । ...वह तैरकर डोंगा को मुश्किल-ब-मुश्किल किनारे ला पाई थी एवं उसके कपड़े अभी गीले ही थे ।

थोड़ी देर बाद वे संयत होकर बोले, ''बेटी, मकान गिर गए हैं । डोंगा कहीं भी टकराकर उलट सकता है ।''

''मैं सब जानती हूँ ।''

काशीबाबू पशोपेश में पड़े रहे । उन्हें समझ नहीं आ रहा था कि इस समय क्या करें, क्या न करें ? ...एक तो खुद की बीमारी, दूसरी घर की चिंता, तीसरे बेटी की ब्याह की चिंता और तिस पर उसकी यह जिद् ! भगवान ही बचाए इससे !!

''तेरे को कुछ हो गया तो ?'' वे कांपती आवाज में बोले ।

''कुछ नई होगा... ओह बाबूजी ?'' वह खीझकर ऐसे बोली जैसे उसके पास बिलकुल भी समय नहीं है, ''देखो न बिचारे मर जाएंगे ।''

यह कहते-कहते सरस्वती की आंखें डबडबा गई । उसके ओंठ फड़फड़ाने लगे, गुस्से से उनका चेहरा तमतमा उठा । आखिर उस जिद्दी लड़की के गुस्से में भी करूणा, ममता और दया की भावना ही तैर रही थी ।

अब काशीबाबू के पास जिद्दी लड़की के साथ रहकर उसे देखने के अलावा और कोई उपाय शेष नहीं बचा । अपनी बीमारी और कमजोर शरीर से ज्यादा उन्हें सरस्वती की फिक्र थी। ...उस समय उन्हें यह भी ख्याल नहीं रहा कि यदि वे दोनों नर्मदा में डूब मरे तो परिवार के शेष लोगों की देखभाल कौन करेगा ?

तूफानी लहरों और कई बार आँधी के भयंकर थपेड़ों ने उनकी नाव को बड़े जोर से उछाला, हर बार ऐसा लगा कि नाव अब उलटी अब उलटी । नाव भी इतनी छोटी कि एक बार में आठ-दस लोगों को ही लाया जा सकता था । चप्पू संभाले-संभाले उसके हाथ दुःखने लगे, शरीर का जोड़-जोड़ दर्द करने लगा । सारा शरीर और कपड़े पसीने से तर-बतर हो गए, लेकिन वह बिना सुस्ताए और आराम किए लगातार नाव खेती रही । बीच में दो रोटियाँ भी खा ली । शाम हो जाने के कारण धुंधलके में अब नाव चलाना मुश्किल था । तट के किनारे पहुंचने पर काशीबाबू ने फिर टोका - ''बेटी, अब तो रहन दे । अंधेरे में वापस नई आ पाएंगे !''

वह चेहरे पर आए पसीने को पोंछती हुई कातर स्वर में बोली- ''बाबूजीऽऽ, थोड़ी जन तो और बचे हैं...'' चार पल बाद वह असमंजस की स्थिति से उबरकर लगभग आदेशात्मक स्वर में बोली, ''बाबू तुम रूको! ...मैं ही चली जाती हूँ !''

विवश काशी बाबू नाव से नीचे उतरे । उनकी आँखों में आँसू आ गए । उन्हें डर था कि वापसी तक अंधेरा हो जाने के कारण उनकी बेटी अब कभी वापस नहीं लौट पाएगी और अभिमन्यु की तरह बलिवेदी पर एक नाम और लिख दिया जाएगा ।

सरस्वती को बहुतेरों ने समझाया, रोका, टोका, मगर वह न मानी ।

वह जाने को उद्यत हुई तो किसी भले मानुष ने उसे एक नया टार्च दिया, एक ने भरी हुई माचिस की डिब्बी भी दे दी । उसकी नाव आहिस्ता-आहिस्ता आगे बढ़ने लगी । उसने पीछे मुड़कर देखा तो बाप-बेटी की नजरें मिलीं और काशीबाबू ने चेहरा नीचे झुका लिया. उस समय उनकी आँखों में हर्ष, विषाद और भयमिश्रित आँसू सांझ के धुंधलके में भी स्पष्ट दिखाई पड़ रहे थे । सरस्वती ने कुछ बोलने के लिए मुँह खोला मगर उसकी आवाज गले में ही फंसकर रह गई । ...विवश पिता की आंखों में मृत्यु-भय, आँसू और चेहरे की थकान को देख भला किसे अच्छा लगेगा ? ...सरस्वती ने एक हाथ में चप्पू थामे अपना दूसरा हाथ हिलाया, फिर आँसू पोंछे । सामने की तरफ मुँह मोड़ा तो लक्ष्य दूर-दूर तक नजर नहीं आ रहा था । साँझ का धुँधलका, रात के अंधेरे की ओर चुपके-चुपके अपना कदम बढ़ा रहा था । ठीक इसी समय बरगद की डाली में छुपकर बैठा एक उल्लू यह सब दृश्य देखकर हौले-हौले मुस्करा रहा था ।

अंततः रात्रि 7 बजे, टार्च की रोशनी के भरोसे वह नाव लेकर मालाखेड़ी की उस जर्जर इमारत के पास, अटकती-भटकती पहुँच ही गई जहाँ आशा-निराशा के डोर में झूलते हुए कुछ लोग अंतिम खेप की यात्रा के लिए उसकी सलामती की दुआ देते उसका इंतजार कर रहे थे । टार्च की रोशनी मद्धिम पड़ गई थी और अंतिम खेप की यात्रा के लिए माचिस की डिबिया के अलावा और कोई सहारा शेष नहीं था । चारों ओर नीविड़ अंधकार का साम्राज्य था। ...पूर्णमासी की रात में यही नर्मदा जहाँ प्राकृतिक सौंदर्य, पारलौकिक भव्यता और पवित्रता के दृश्य निर्मित करती है - ऐसा लगता है मानो धरती में यदि कहीं स्वर्ग है, तो बस यहीं है, वहीं इस समय कराल-काल रात्रि की बेला में, उसका यह विस्तारित क्रुद्ध रूप भयावह कंपकंपी छुड़ा देने वाला था । ...इस समय सरस्वती की स्थिति डाल से चूके उस बंदर की भांति हो गई थी जिसके पास ऊँचाई से नीचे गिरने के अलावा और कोई विकल्प शेष नहीं होता । अब वहाँ से रात में वापस लौटना मुमकिन न था । उसका मन असमंजस व आशंका में डूब गया । अपने डूब मरने के भय से ज्यादा वह परिवार की चिंता में व्याकुल होने लगी । उसके बिना सभी भाई-बहनों की परवरिश का भार उसके कमजोर व बीमार माता-पिता नहीं उठा पायेंगे, यह वह भली-भांति जानती थी । ...सहज मानवीय भावनाओं से वशीभूत होकर उसने अब तक

जो कुछ किया उसे केवल साहस की संज्ञा देना उपयुक्त न था । ...चिंता से उसका भी मन व्याकुल होता है... भय उसे भी लगता है, रोना उसे भी आता है... जैसे उसे इस समय रोना आ रहा था! ...मगर अब क्या किया जा सकता था ?

उस रात उन्हें संकट से उबारा एक नवयुवक ने, जिसने उस इमारत से कुछ दूरी पर स्थित 20 फुट पानी में डूबे साइकिल को खोज निकाला और उसे रस्सी से बांधकर बाहर निकाला गया । इस तरह साइकिल के टायरों ने उसकी वापसी का मार्ग प्रशस्त किया ।

दूज की चाँद हो गई टार्च की रोशनी के भरोसे तो वे कभी गंगापार नहीं कर सकते थे, मगर उन्होंने यह किया, वह भी रात में साइकिल के जलते टायरों की रोशनी के सहारे । ...हालांकि यहाँ न गंगा थी, न राम, न केंवट । यह त्रेता युग भी नहीं था कि उतराई देने के लिए पिया की नजरों पर वारि होकर कोई मुदित मन से अपनी अंगूठी उतारती और कवि यह लिखने को विवश हो जाता, 'पिय हिय की सिय जान निहारी, मनि मुंदरी मन मुदित उतारी।' ...रात 10 बजे वह अंतिम सत्रह में से दस लोगों को सुरक्षित निकाल लाई । अब शेष बचे सातों के पास वहां रात गुजारने के अलावा और कोई चारा नहीं था ।

अब यह कहना मुश्किल है कि उस रात्रि अंतिम खेप के यात्रियों को नर्मदा ने जीवन दान दिया या सरस्वती ने या उस पुराने साइकिल के जलते टायरों ने या फिर जर्जर इमारत के बूढ़े बाजुओं ने । बहरहाल 40 गज दूर, 20 फुट पानी में डूबे साइकिल का अन्वेषण कर रस्सी बांधकर बाहर निकालने का दुस्साहस उस रात्रि मालाखेड़ी में जिस नवयुवक ने किया वह कारनामा ठीक वैसा ही था जैसे सुबह भरी बाढ़ में एक नवयुवक ने मालाखेड़ी से होशंगाबाद की दूरी नापने की कोशिश की थी । हालांकि बाढ़ के तेज प्रवाह में शिकस्त हो चुके उस नवयुवक की जान सुबह 7 बजे दो मछुआरों ने बचा ली थी मगर उससे प्राप्त जानकारी ने पल भर में होशंगाबाद से भोपाल-दिल्ली की दूरी भी तय की, प्रशासन को चौकन्ना किया और अंततः सरस्वती को अपनी पुरानी नाव समेत मालाखेड़ी तक पहुँचाया । यह आश्चर्य नहीं तो और क्या है कि बाढ़ से लबालब पानी में न वे दोनों नवयुवक डूबे, न सरस्वती की नाव उलटी, न वह जर्जर इमारत जमींदोज हुई ! दो घण्टे बाद रात्रि 10 बजे जब वह बूढ़ी

इमारत अपनी अंतिम सांस लेती हुई नर्मदा की गोद में धराशायी हो रही थी तब उसे देखने वाला वहाँ नर्मदा के सिवा और कोई शेष नहीं था । इधर इसी समय अपनी अंतिम खेप की यात्रा पूरी कर सरस्वती व अन्य सहयात्री, होशंगाबाद के एक तट पर, ईश्वर का शुक्रिया अदा कर रहे थे ।

सचमुच उस रात्रि निविड़ अंधकार की बेला में, जलते हुए टायरों की रोशनी के भरोसे, तृणवत् हिण्डोले ले रही नाव को, डूबे हुए वृक्षों की शाखाओं, टूटे-फूटे मकानों के अवशेषों और बहते हुए बांस-बल्लियों से बचाकर ले आना, क्रुद्ध नर्मदा मैया की आंखों से काजल चुराने से कम न था ।

...बाढ़ की वह भयानक रात ! ...आह !! ...थककर चूर हो चुकी सरस्वती गहरी निंद्रा में भी दर्द और पीड़ा से कराह रही थी... प्रसव जैसी गहरी पीड़ा से । उस रात क्रोध से उफनती नर्मदा भी जैसे हार गई थी - अपने आंचल के साये में पली-बढ़ी एक जिद्दी लड़की की ममता, करूणा व साहस को देखकर ।

अगली सुबह बाढ़ का पानी कुछ उतरा तो मालाखेड़ी के उस ध्वस्त इमारत के पास सबसे पहले पहुंचे नाविकों की आँखें नम हो गई । उन्होंने देखा कि वहां न इमारत है न वे सातों लोग ! ...अब यह उनका दुर्भाग्य नहीं तो और क्या है कि उस रात सरस्वती की छोटी-सी नाव में, न उनके लिए कोई जगह बची थी, न ही उनके मरने पर किसी ने आँसू बहाए थे !

(4)

उफनती बाढ़ में नाव चलाने की साध, जिसे वह बचपन से सपनों में देखती आई थी, उस दिन नर्मदा मैया ने पूरी कर दी । सहज मानवीय भावनाओं से वशीभूत होकर उसने जो कुछ अकल्पित किया, उससे अनेक लोग हैरान-परेशान हैं । जिद्दीपन के कारण पड़ोसी उसे 'पगली' कहते हैं और गाँव की कुछ औरतों का कहना है कि उसे 'हवा' यानी प्रेतात्मा लगी हुई है! ...भगवान जाने क्या सच है ? मगर एक बात सोलह आने सच है - हाथी की सवारी उसने फिर की, मगर इस बार होशंगाबाद की धूल-धूसरित गलियों में नहीं बल्कि दिल्ली के साफ-सुथरे राजपथ पर । तब हाथी की सवारी करते समय उसने अपने भीतर की रानी को पाया था - आज सरस्वती को देखा । तब वह

पुराने कपड़ों में मैली-कुचैली-सी केवल तीन फुट की थी, आज वह खास वेशभूषा में सजी-संवरी साढ़े पांच फुट की है । तब बारिश का मौसम था और आसमान में बदली छाई हुई थी, आज जाड़े का मौसम है और आसमान खुला हुआ है । तब बाबूजी के थप्पड़ से प्रेरित 'महावत की कृपा दृष्टि' से पुरस्कार में हाथी की सवारी कर उसने होशंगाबाद की गलियों में बहादुरी दिखाई थी और तमाशाई बच्चों ने तालियाँ बजाई थी, अब उसे बहादुरी के लिए राजधानी दिल्ली में पुरस्कार दिया गया था और भाव-विभोर दर्शकों के हजारों हाथों ने एक साथ तालियां बजाई । तब उसने अथाह जल संपदा से भरपूर, नर्मदा की गोद में बसे होशंगाबाद नगर के जिला मुख्यालय में तिरंगा फहरते देखा था और भीड़ के बीच, उपेक्षित-सी खड़ी बैण्ड बाजे पर राष्ट्रधुन बजते पहली बार सुन वह रोमांचित थी, आज उसने राजा और नवाबों की नगरी राजधानी दिल्ली के राजपथ पर तिरंगा फहरते देखा है और भारी भीड़ के बीच, अन्य बहादुर बच्चों के साथ राजपथ में राष्ट्रधुन बजते सुन वह एकदम शांत है । तब 15 अगस्त 1973 दिन बुधवार था आज 26 जनवरी 1974 दिन शनिवार है । एक बात और ...तब हवाई-यात्रा के ख्याली पुलाव से गुस्से और शर्म के मारे उसने अपना माथा ठोंका था और उसके दिल की धड़कन चलती रेल की तरह बढ़ गई थी, इस बार वह सचमुच हवाई जहाज में बैठकर भोपाल से दिल्ली आई और उसके दिल की धड़कन चलती रेल की तरह बिलकुल भी नहीं बढ़ी ।

❖ ❖ ❖ ❖ ❖

वह सरस्वती के लिए खास दिन था । यह गणतंत्र-दिवस से दो दिन पहले की बात है। उस दिन न धूप थी, न वर्षा । पुरवैया हवा का झोंका लोगों को हलका-हलका सहला रहा था । उन्मुक्त हवाओं से बिचरते कुछ पंछी भी नजर आ रहे थे । उस दिन वह एक खास वेशभूषा में थी और पुरस्कार लेने के लिए अन्य बहादुर बच्चों के साथ समारोह स्थल पर लायी गई थी । पुरस्कार लेने की उसकी बारी सबसे पहले आई । ...वह मंच के समीप पुरस्कार लेने पहुंची तो चारो ओर छाई निस्तब्धता के बीच वाचिका की गंभीर और मीठी आवाज माईक से गूंजने लगी । ''30 अगस्त 1973 को नर्मदा नदी में आई भीषण बाढ़ में मध्यप्रदेश स्थित होशंगाबाद नगर के दो-तिहाई से भी अधिक हिस्से

और नदी किनारे के पचासों गाँव जलमग्न हो गए थे । बाढ़ का पानी पूर्व रात्रि में बहुत तेजी से चढ़ा और वह खतरे के निशान से छब्बीस फीट ऊपर तक पहुंच गया । सुबह होते-होते होशंगाबाद से दो मील दूर मालाखेड़ी गाँव सहित अनेक गाँव बाढ़ में डूब चुके थे । अनेक लोग नर्मदा के तेज प्रवाह में बह गए थे । बाढ़ की विभीषिका से उत्पन्न विपदा की इस घड़ी में होशंगाबाद निवासी एक धीवर लड़की, नाम कुमारी सरस्वती बाई, आत्मजा श्री काशीराम, उम्र सोलह साल ने स्वविवेक से, अपनी नाव द्वारा मालाखेड़ी गाँव में फंसे सौ से भी अधिक लोगों की जान बचाने में अदम्य साहस और धैर्य का परिचय दिया । निःस्वार्थ मानव सेवा और अद्वितीय बहादुरी की यह मिसाल अनुपम है इसीलिए राष्ट्र की ओर से सम्मान स्वरूप उन्हें यह शौर्य पुरस्कार दिया जा रहा है।'' शायद उस समय सरस्वती पूरी बात ध्यान से सुन नहीं पाई या फिर समझ नहीं पाई । ...उसे तो यह भी नहीं मालूम कि इनाम में कौन-सा पदक मिला है । औरों के पूछने पर वह निरक्षर-अज्ञानी कहती है, ''कछु बहुत बड़े मिले हैं । ....इंदिरा गांधी जित्ते बड़े! उने तो जानते हौ ना ? ...उने हमी दिल्ली में मिले रहे। ...तुमे मालूम नई का... उहाँ हम जहाज मा उड़कर गइ रही ।'' ...वह और भी बहुत कुछ बताती है, बताना चाहती है, बिना रूके, बिना चूके ! और तब उसके भोले-भाले दमकते चेहरे को देख आश्चर्य होता है कि उनके छोटे से प्रश्न पर इतना लम्बा-चौड़ा व्याख्यान वह क्यों दे रही है !

समय बीतते न बीतते, बीत ही जाता है और यादों को, ख्वाबों को, भूलते न भूलते लोग भूल ही जाते हैं - चाहे अच्छी हो या बुरी । समय इसी तरह साल-दर-साल बीतता रहा । ...और प्रियम्वदा सरस्वती...? उनकी जबान में मछुआरे की वह जिद्दी लड़की ! ...अनपढ़, निपट गंवार और पगली!! ...और वह देश-परदेश में मिले मान-सम्मान और समालोचकों की उपमाओं से बेखबर नर्मदा के थपेड़ों, बाबूजी की झिड़कियों और रोजमर्रा की समस्याओं से जूझती, विस्मृति के कुहासे में कहीं खो गई । ...वह वेदव्यास रचित महाभारत की यमुना तट पर नाव चलाने वाली, मछुआरन लड़की, दासराज कालिका पुत्री सत्यवती तो थी नहीं, न ही सर्वपूजित, पुण्य-सलिला 'शांकरी' थी, भला अपने मन की 'शांकरी सुता' को लोग क्यों याद रखते ?

विमर्श

जीवट कैशोर्य की उद्दाम गाथा : मछुआरे की लड़की

- प्रो. (डॉ.) सत्येन्द्र शर्मा, *प्राध्यापक*

हिन्दी के विद्वान, चिंतक, समीक्षक, संपादक व कवि प्रोफेसर सत्येन्द्र शर्मा ने विनोद कुमार वर्मा कृत 'मछुआरे की लड़की' को हिन्दी की श्रेष्ठ कहानियों में से एक माना है । यह गरीब परिवार के घरौंदे में पली-पुसी, विकलांगता का दंश झेल रही एक नामालूम-सी लड़की के असाधारण पराक्रम की सच्ची गाथा है । संप्रति, समीक्षा ग्रंथ 'कथा साहित्य में विकलांग-विमर्श' (2010) में प्रकाशित समीक्षा (पृ. 142-145) - शब्दशः दिया जा रहा है, ताकि शोध-छात्रों को कथा-शिल्प की बारीकियों को समझने में मदद मिले ।

- निदेशक प्रयास प्रकाशन

एक दैनिक समाचार पत्र की कथा प्रतियोगिता में वरीयता प्राप्त कर प्रकाश और चर्चा में आई, विनोद कुमार वर्मा की कहानी **'मछुआरे की लड़की'** यदि अपने जन्मकाल से ही सामाजिकों और कथा रसिकों के चेतना केन्द्र में है तो यह स्वाभाविक ही है । समाज के एक अचीन्हे और कथित रूप से छोटे वर्ग मल्लाह परिवार के घरौंदे में पली-पुसी, काली-कलुटी लुलिया उर्फ सरस्वती उर्फ प्रियम्बदा उर्फ शांकरीसुता के साहस, दृढ़ता, इच्छा शक्ति, उद्दाम आवेग, दायित्व बोध, घनीभूत संवेदना, निर्भयता और महत आकांक्षा को उकेरती यह गाथा अपने एकीकृत प्रभाव में **कथा शिल्पी जयशंकर प्रसाद** के उन अनेक नारी चरित्रों का उदात्त स्मरण कराती है, जो जीवन का सूत्र तो बनती ही है, अपने कर्म कौशल से जन-उपवन की स्थाई सुवास बन जाती है।

कथाकार विनोद कुमार वर्मा चाहते तो उसकी पहचान मछुआरे की लड़की में ही कर इसी संज्ञा से उसकी तथा-कथा कह सकते थे, किन्तु काली-कलुटी लुलिया से लेकर शांकरी सुता के क्रमिक विकास तक उसकी संज्ञाओं का रूपान्तरण उसके व्यक्तित्व के अनुरूप होता चला आता है, बल्कि कहना चाहिए कि वह यह संज्ञाएँ अर्जित करती चली जाती है । चरित्र नायिका के व्यक्तित्व का उद्‌घाटन, कथा की उत्तरोत्तर उदात्त मनोभूमि और क्रमशः उसे मिलते जाते नाम तीनों उपादान इस तरह विन्यस्त हैं कि वे परस्पर अंगीभाव से गुँथे हुए नजर आते हैं ।

प्रकृत्यांचल के बड़े कैनवास में उकेरी गई यह कथा शुरूआत में ही जिस ऊँचाई और विरात्तव की संभावना जताती है, उसमें व्यक्त सरस्वती की गाथा अपनी परिणति में वैसा ही प्रतिफल उद्‌भाषित करती है । एक व्यापक प्रकृति फलक में एक उत्तुंग जीवन की झलक । पूरे कथा विन्यास में नर्मदा की भौगोलिक इयत्ता जैसे पसरी पड़ी है उसी के समानांतर बल्कि उसमें समरस सरस्वती की अप्रतिम शौर्य गाथा लय-लीन है । कहना मुश्किल है कि रचनाकार ने लड़की के असाधारणत्व को दिखाने के लिये नर्मदा के यथार्थ विराट को उल्लेखित किया है या वह वस्तुतत्व की मांग के तहत है, किन्तु जो भी है उसे रचनाकार ने एक ऐसे सिद्धहस्त चित्रकार की प्रतिभा का परिचय दिया है जो अपने नायक को वांछित ऊँचाई देने के लिये दृश्य फलक की पृष्ठभूमि को उदात्त और उत्तुंग भावबोध कराने वाले रंगों की सृष्टि करता है । सच तो यह है वह लड़की और नर्मदा अपने व्यक्तित्व के अनेक गुणों के समानता के कारण परस्पर पूरक और पर्याय लगती हैं ।

नर्मदा दुर्द्धर्ष है, वेगवती है, तट प्रदेशों को सींचती, सिरजती है, सदानीरा होने से सतत कल्याणमनी और वन्दनीय है । मछुआरे की लड़की बाल्यावस्था से अपने परिवार के भरण-पोषण के लिये सजग संचेष्ट है, विवाह

के आकर्षण से अधिक कर्त्तव्यबोध से सम्प्रक्त है, अपशब्दों से मर्माहत किन्तु लक्ष्य प्राप्ति के लिये दृढ़ है । आपदा में अडिग, अविचलित, सहज मानवीयता से आपूरित, प्राणों को दाँव पर लगा मनुष्य भाव की रक्षा के लिये संकल्पित उच्चाकांक्षाओं से पूरित प्रेरित कहा जाता है व्यक्तित्व का विधायक तत्व परिवेश है, कहना न होगा मछुआरे की लड़की का व्यक्तित्व नर्मदा की लोल लहरियों में पल्लवित पोषित होने के कारण वह ऐतिहासिक घटना की कर्ता और कथा का चरित नायक होने का दर्जा पा सकी है ।

मछुआरे की लड़की की कथा वास्तव में एक यथार्थ घटना है जिसकी तिथिकाल तक का उल्लेख रचना में हुआ है, किन्तु इस जानकारी से रचना अधिक प्रभविष्णु विश्वसनीय और तर्क संगत लगने लगती है । लोकव्यापी घटना को रचना का आधार बना लेना सरल तो है किन्तु उसका निर्वाह उतना ही कठिन बल्कि 'तलवार की धार पे धावनों' जैसा होता है । इस तथ्य को वे रचनाकार भलीभाँति जानते होंगे जिन्होंने इतिहास प्रसिद्ध घटनाओं को रचनाओं का वर्ण्य विषय बनाया है ।

इस कथा की घटना, स्थान, तिथि को छोड़कर शेष संपूर्ण रचनाकार का मनोजगत है, किन्तु यह मनोजगत इस खूबी से रूपायित है कि पूरे रचना विधान में सरस्वती ऊभ-चूभ दिखाई पड़ती है । इसमें संदेह नहीं कि मछुआरे की उस नामालूम-सी विकलांग लड़की का असाधारण पराक्रम और मानवीय संरक्षा का भाव रचना की अन्तर्वर्ती शक्ति है और शायद रचना की प्रेरणा का मूल कारण ही घटना का वैशिष्ट्य है, किन्तु लड़की के चारित्रिक गठन, विकास और उदात्त परिणति को विश्वसनीय विकास देना रचनाकार का अपना कौशल है ।

प्रसंगवश यहाँ एक शाश्वत प्रश्न साहित्य मात्र के हेतु के रूप में उतरता है और वह यह है कि वस्तु तत्व की मार्मिकता या शक्तिमत्ता रचना को

अपनी ओर से अधिक ताकतवर बना देते हैं, या फिर इसका सारा श्रेय रचनाकार के अभिव्यक्ति कौशल या फिर संवेदनात्मक अनुभूति को जाता है । 'मछुआरे की लड़की' का वस्तु संसार इस जिज्ञासा का उत्तर ढूँढ़ने में हमारी बड़ी मदद कर सकता है । इस रचना में भी संवेदना तो बीज रूप में बुनियाद बनकर उपस्थित है ही, जो रचनाकार को लड़की की उत्कृष्ट उपलब्धि के बखान में ही अपने रचनाकर्म को संतुष्टि नहीं दे पाता वरन् वह उसके उस अतीत और बाल्यावस्था के परिवेश को शब्द-शब्द आविष्कृत करता है जिसमें पल-बढ़कर वह लड़की उदात्त शिखर को छूती है ।

दूसरा, वस्तु तत्व का चयन भी तो लेखक की संवेदना का अंग ही माना जाएगा और तय है कि उसके श्रेय का भागीदार भी वही होगा । **आचार्य रामचन्द्र शुक्ल** ने काव्य के क्षेत्र में हिन्दी के शिखर कवियों की विवेचना करते हुए 'मार्मिक स्थलों की पहचान' सभी कवियों में नहीं होती कहकर वस्तु चयन की महत्ता को ही रेखांकित किया है । वास्तव में विनोद कुमार वर्मा के रचनाकार ने **'मछुआरे की लड़की'** के जिस प्रातिभ को संवेदना के केन्द्र में रखकर अनुभूत किया है, उसका श्रेयस भी उनके रचनाकार को तो जाता ही है, साथ ही साधारण में असाधारणत्व को देखने-दिखाने का जो आनुषंगिक लाभ इस रचनाकार को मिलता है, वह लेखक का अतिरिक्त और सहज प्राप्य है ।

मछुआरे की लड़की की बाल्यावस्था में ही उसकी आंतरिक उड़ान और बलवती आत्मा के जो संकेत रचना के प्रारंभ में ही दिये हैं- जैसे हवाई जहाज देखकर उसमें बैठ पाने की उत्कंठा और हाथी पर बैठने की जिद आदि में उसका पल्लवन रचना के अंत में स्वाभाविक गति और फल प्राप्ति में दिखाई देता है । मछुआरे की लड़की की ये बालोचित उत्कंठाएँ सर्वथा सामान्य है किन्तु इन्हें कथा का उपजीव्य बनाकर और उनकी सटीक परिणति दिखाकर रचनाकार

उन प्रवृत्तियों को वैशिष्ट्य दे देता है ।

रचना में आदि से अंत तक नर्मदा का वैभव फैला पड़ा है । उसकी भौगोलिक सबलता, पौराणिक और सांस्कृतिक माहात्म्य, उसके इर्द-गिर्द प्रकृति का प्रशस्त आँगन, उत्स से लेकर अरब सागर तक की यशस्वी यात्रा गाथा, उसका पुण्य सलिला वत्सल स्वरूप और प्रलयंकारी विनाशी रूप.... इस वर्णन के साथ-साथ ही लिपटी हुई है मछुआरे की लड़की की गाथा । जैसा कि पूर्व में भी संकेत कर चुका हूँ **दोनों वर्ण्य विषय अलग-अलग इकाई होकर भी परस्पर विलीन हो गये हैं । जाने क्यों नर्मदा के माहात्म्य में उस लड़की का और लड़की के महत्व वर्णन में नर्मदा की प्रकृति भासित होती चलती है । यह लेखक का सायास कौशल हो या नहीं पर कथा शिल्प की उल्लेखनीय उपलब्धि है ।**

कथा की समाप्ति करते हुए रचनाकार को वेदव्यास कृत दासराज कालिका पुत्री सत्यवती का स्मरण आना रचना विधान का आग्रह चाहे भले हो किन्तु इसके संकेत मात्र से कथा की अर्थच्छटा और गरिमा बढ़ गयी है । सत्यवती इस महादेश के इतिहास की धारा बदलने का कारण बन गयी थी, यही आधार किसी दलितवादी कथा लेखक को अपने मनोजगत की ग्रंथि को व्यक्त करने और आक्रोश अभिव्यक्ति के लिये पर्याप्त है, किन्तु एक बड़े अभिप्राय और मनुष्य की कल्याण कामना से रचे जाने वाले साहित्य में ऐसे प्रसंग संकेत में अभिव्यक्ति पाकर भी कैसी अर्थ व्याप्ति दे जाते हैं, यह यहाँ महसूस किया जा सकता है । मेरी राय में कथित दलित-साहित्य के सर्जकों को अपने 'स्कूल' में ऐसी रचनाओं को केन्द्र में रखकर गंभीर विमर्श कर रचनात्मक स्तर पर दिशा-बोध अर्जित करना चाहिए ।

कहानी में गणतंत्र दिवस के अवसर पर सरस्वती बाई के परिचय वाचन में पुनरूक्ति से बचकर भी कहानी की काया छोटी नहीं की जा सकती थी

किन्तु ऐसा करना कहानी के कसाव का लक्षण होता । प्रलय की रात में थककर चूर हो चुकी सरस्वती के दर्द और पीड़ा को प्रसव जैसा बताना भी शायद युक्तिसंगत नहीं किन्तु यहाँ रचनाकार के अपने तर्क हो सकते हैं । बहरहाल, कहानी के ऐसे एकाधिक स्थल सुडौल, स्वस्थ, समुन्नत चेहरे पर डिठौने (बुरी नजर से बचने के लिये लगाया गया काला टीका) की भाँति समझे जाने चाहिए।

शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सतना (म.प्र.)
संपर्क ''श्यामायन'' सहकार मार्ग, सतना

22 फरवरी 1954 को जांजगीर-चाम्पा जिले के ग्राम फगुरम में जन्में छत्तीसगढ़ की माटी और ग्रामीण परिवेश में पले-बढ़े **डॉ. विनोद कुमार वर्मा** गहन संवेदना के कथाकार हैं। कहानी **'मछुआरे की लड़की'** (2000) राष्ट्रीय स्तर पर चर्चित। प्रकृत्याँचल के बड़े केनवास पर उकेरी गई यह कहानी **'कथा शिल्प'** की दृष्टिकोण से बेजोड़ है। इसे **विकलांग-विमर्श की कहानियाँ** (2010), अविभावित मध्यप्रदेश के कथाकारों पर केन्द्रित कथाकोश **'कथा मध्यप्रदेश'** (2017) के साथ **बस्तर विश्वविद्यालय** के **एम.ए.** के **पाठ्यक्रम** में शामिल किया गया है।

अकादमिक क्षेत्र में **18 अनुसंधान-पत्रों** (कृषि विषयक) आदि अनेक उपलब्धियों के साथ एक लघु उपन्यास **'पुनरावृत्ति'** (2001), कहानी संग्रह **'मेरी प्रतिनिधि कहानियाँ'** (2016), समीक्षा ग्रंथ **'समकालीन विमर्श के बदलते प्रतिमान'** (डॉ. विनय कुमार पाठक के साथ, 2017), **'विमर्श के निकष पर छत्तीसगढ़ी'** (2018), **छत्तीसगढ़ी का सम्पूर्ण व्याकरण** (डॉ. विनय कुमार पाठक के साथ, 2018) प्रकाशित।

एम.एस-सी. (कृषि), पी-एच.डी. तक शिक्षा प्राप्त डॉ. वर्मा मूलतः कथाकार एवं विमर्श लेखक हैं। आपकी विशेषज्ञता कृषि अनुसंधान एवं शिक्षण में भी उतनी ही है। संप्रति, आप अचंल के लोकप्रिय कृषि वैज्ञानिक माने जाते हैं। आप **विकलांग विमर्श** पर केन्द्रित **त्रि-दिवसीय अंतरराष्ट्रीय संगोष्ठी** (अमलनेर, महाराष्ट्र 17 से 19 जुलाई 2014) के **अध्यक्ष मंडल** में शामिल रहे हैं।

कई पत्र-पत्रिकाओं के संपादन के अलावा **वसन्ती वर्मा** कृत छत्तीसगढ़ी काव्य संग्रह **'मोर अँगना के फूल'** (2012), **'मितानीन'** (2013) एवं **'मउरे मोर आमा डारा'** (2015) का विमर्श लेखन के साथ संपादन। **'मोर अँगना के फूल'** को विमर्श के साथ प्रकाशित छत्तीसगढ़ी काव्य साहित्य की प्रथम कृति माना गया है। (PSC प्रारंभिक परीक्षा, 2018)

संपर्क - MIG-59, नेहरू नगर, बिलासपुर (छ.ग.) 495 001
मो. : 98263-40331
ई-मेल : vinodverma8070@gmail.com

Vadanya Publication TM